SWAR SINDHU: NATIONAL PEER-REVIEWED/REFEREED JOURNAL OF MUSIC
A UGC CARE LISTED JOURNAL
ISSN 2320-7175 (O) | VOLUME 12, ISSUE 03, DECEMBER, 2024
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org

पुष्टिमार्गी वैष्णव सम्प्रदाय में अष्टछाप कवियों का सांगीतिक योगदान

KUSUM SINGH[1] PROF. SANGEETA SINGH[2]

[1]Research Scholar, Department of Instrumental Music, Faculty of Performing Arts, Banaras Hindu University, Varanasi
[2]Professor, Department of Instrumental Music, Faculty of Performing Arts, Banaras Hindu University, Varanasi

सार

प्राचीनकाल से ही भारतवर्ष एक धर्म प्रधान देश रहा है। इसके परिणामस्वरूप समय-समय पर काल क्रमानुसार कर्म, ज्ञान और भक्ति पर आधारित अनेक धर्मों का यहाँ प्रचार व प्रसार होता रहा है। इन सब मार्गों में भक्ति मार्ग अत्यन्त सुगम और सरल रहा है। हिन्दी साहित्य के इतिहास के अनुसार मध्यकाल में भक्ति की दो प्रमुख धाराएँ- कृष्ण भक्ति शाखा और राम भक्ति शाखा के रूप में निःसृत हुई कृष्ण भक्ति शाखा का एक प्रमुख सम्प्रदाय ''पुष्टिमार्ग'' था जिसे इसके प्रवर्तक के नाम के आधार पर वल्लभ सम्प्रदाय भी कहा जाता है। इस सम्प्रदाय के अन्तर्गत श्रीनाथ जी की आठ समय की सेवा का 'मंडान' किया गया। यह सेवा सम्प्रदाय अष्टयाम सेवा के नाम से जानी जाती है। श्रीकृष्ण की दिनचर्या के ये आठों नाम क्रमशः मंगला (जगवानी), श्रृंगार, ग्वाल, राजभोग, उत्थापन, भोग, संध्या आरती और शयन खण्डों में विभक्त है।

बीज शब्द: *पुष्टिमार्ग, वाग्गेयकार, परिष्कृत, अलंकारवादी, उदात्तीकरण, शुद्धाद्वैत*

भूमिका

राग और भोग की प्रभुता वाले इस पुष्टिमार्ग में भगवान की सेवा बिना राग अर्थात् संगीत के होना असंभव ठहराया गया है। अतः इस सम्प्रदाय के मंदिरों में संगीत का विशेष महत्व है। संगीत की इस प्रणाली का लगभग 500 वर्ष पुराना अपना इतिहास है जिसके स्वरूप को संवारने में अनेक कीर्तनकारों, कवियों तथा कवि गायकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

सम्प्रदाय के संस्थापक श्री वल्लभाचार्य जी ने आठों यामों की सेवा में दक्षिण भारत की कीर्तनादि विधियों से प्रभावित होकर संगीत का विधान किया। इस निमित्त उन्होंने चार वाग्गेयाकारों कुम्भनदास, सूरदास, कृष्णदास और परमानन्ददास की नियुक्ति कीर्तन सेवा के लिए करा दी। इस सेवा विधान को और रंजक, तार्किक और प्रभावशाली बनाने के लिए वल्लभाचार्य जी के सुयोग्य उत्तराधिकारी और पुत्र गोस्वामी विट्ठलनाथ जी ने अष्टछाप-मण्डल की स्थापना की। इस मण्डल में पूर्व के चार वाग्गेयकारों के अतिरिक्त उन्होंने गोविन्द स्वामी, छीतस्वामी, चतुर्भुजदास और नन्ददास को भी सम्मिलित कर लिया। आठों आयों की सेवाओं में नियुक्त इन वाग्गेयकारों को 'अष्टछाप' कहा गया है।

इन आठों कवियों के जीवन पर दृष्टि डालने पर ज्ञात होता है कि सम्प्रदाय में प्रवेशन पाने अथवा वल्लभाचार्य जी या गोस्वामी विट्ठलनाथ की शरण में आने से पूर्व सभी कवि संगीत तथा काव्य रचना में पारंगत थे। इस प्रकार वे काव्य और संगीत की विभिन्न परम्पराएँ शास्त्रीय संगीत के समागम से एक संहिलष्ट शैली ने सपाकार ग्रहण किया, जिसे आधुनिक काल में अष्टछाप संगीत अथवा हवेली संगीत के नाम से जाना जाता है।

मध्ययुगीन भक्ति सम्प्रदायों में कृष्ण

मध्ययुग में कृष्णभक्ति का प्रचार ब्रजमण्डल में बड़े उत्साह और भावना के साथ हुआ। इस सन्दर्भ में वल्लभ, निबार्क, राधा वल्लभ, हरिदासी और चैतन्य (गौड़ीय) सम्प्रदाय विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन सम्प्रदायों के अन्तर्गत श्री कृष्ण का क्या स्वरूप और स्थान है, यह जानना आवश्यक है।

आचार्य वल्ल्भ के अनुसार, श्री कृष्ण ही पूर्वानन्द स्वरूप पूर्ण पुरूषोत्तम परब्रह्म है। वे सत् चित और आनन्द स्वरूप है। वे व्यापक, नाशरहित, सर्वशक्तिमान, स्वतंत्र, सर्वज्ञ, स्वजातीय-भेद-रहित है और उनके अनन्त रूप हैं। वे श्रीकृष्ण अपनी आनन्द-प्रदायिनी शक्तियों को अपने में प्रसारित करके अनेक अप्राकृतिक लीलाएँ किया करते हैं- स्वयं लीला ही उनका प्रयोजन है।

निम्बार्क सम्प्रदाय में कृष्ण के वामांग में सुशोभित राधा के साथ कृष्ण की उपासना का विधान है। समस्त वस्तुओं के मूल स्त्रोत कृष्ण ब्रह्म ही हैं। भक्तों पर अनुग्रह करने के लिए कृष्ण अवतार धारण करते है। ब्रह्म और शिव भी कृष्ण की वन्दना करते है। उनके चरणारविन्द को छोड़कर जीवों के लिए अन्य गति नहीं है। दैन्य भाव से उनकी कृपा प्राप्त होती है और फिर प्रेममूला भक्ति द्वारा जीव का कल्याण होता है।

राधावल्लभ सम्प्रदाय में श्रीकृष्ण का प्रमुख स्थान नहीं है, राधा ही प्रमुख है। श्रीकृष्ण आनुवांशिक रूप से वर्णित हैं, किन्तु इस वर्णन में कृष्ण के भीतर सभी व्यक्तियों का व्यवहार अवश्य लक्षित होता है। वृन्दवन विहारी कृष्ण ही रसिक किशोर रूप में एकमात्र नित्यविहारी पुरूष है उनकी पराप्रकृति श्री राधा है, जो चित्-अचित् विशिष्ट आहलादिनी निजशक्ति रूपा है। सारा चराचर जगत इन्हीं रसिक युगल किशोर का प्रतिबिम्ब है। भगवान कृष्ण पूर्ण पुरूषोत्तर परात्पर ब्रह्म के भी आदि-कारण और ईश्वरों के भी ईश्वर है। श्रीकृष्ण का वृन्दावनविहारी, मथुरावासी और द्वारकावासी के रूप में वर्णन मिलताा है। ऐश्वर्य, ज्ञान, शक्ति और पराक्रम को अन्तलीन कर प्रेम और माधुर्य की साक्षात मूर्ति बन गोप-गोपियों के साथ लीलारत रहते हैं। वे राधापति होकरव रसराज श्रृंगार के सौन्दर्यमण्डित रूप का विस्तार करने वाले है। इस सम्पद्राय में श्रीकृष्ण का उपास्य नाम 'राधावल्लभ' है।

हरिदासी सम्प्रदाय (सखी-सम्प्रदाय) में भी श्रीकृष्ण का स्वरूप लगभग इसी प्रकार वर्णित है। स्वामी हरिदास के नित्यविहारी कृष्ण को निकुंज लीलाओं का गान किया है। इस सम्प्रदाय में निकुंजविहारी कृष्ण सर्वोपरि है। ये कृष्ण न तो सृष्टि रचना प्रक्रिया में पड़ते हैं, न प्रभुता धारण कर संसार के क्रियाकलाप के प्रति दायित्व रखते हैं। सृष्टि-रचना, लय, स्थिति आदि के समस्त कर्म उन्होंने ईश्वर पर छोड़े है, जो कृष्ण से लघु माने गये हैं। ठकुराई से दूर रहकर निकुंज लीला में रत रहना ही कृष्ण का स्वभाव है। सहज श्रृंगार रस में लीन होकर निकंज लीला परायण कृष्ण की उपासना और नित्यविहार दर्शन ही सहचरी या सखी का काव्य है।

गौड़ीय सम्प्रदाय के प्रवर्तक चैतन्य महाप्रभु ने श्रीकृष्ण को ब्रजेन्द्र कुमार कहा है और यह माना है कि वे ब्रज में गोलोक की लीलाओं-सहित विहार करते हैं। वे परम तत्व, पूर्णज्ञान तथा आनन्द रूप है। श्रीकृष्ण की अनन्त शक्तियाँ है, उनमें एक आहलादिनी शक्ति है। राधा इसी शक्ति का रूप है। चैतन्य चरितामृत में राधा और कृष्ण के स्वरूप तथा शक्तियों का बड़े विस्तार के साथ वर्णन मिलता है जो गौड़ीय सम्प्रदाय को स्पष्ट करने में समर्थ है। इसमें ब्रजेन्द्र कुमार कृष्ण और गोलोकवासी कृष्ण में अभिन्नता स्वीकार की गयी है और कृष्ण की किशोरावस्था का ही वर्णन है, अतः लीलाओं का आधार कान्ता-भाव या माधुर्य भाव है।

वल्लभ-सम्प्रदाय के कृष्णभक्त कवि-

श्री वल्लभाचार्य ने ब्रजमण्डल में जिस कृष्णभक्ति को प्रतिष्ठित किया, उसका दार्शनिक आधार शुद्धाद्वैत दर्शन है। साधना और व्यवहार क्षेत्र में शुद्धाद्वैत दर्शन के साथ जिस भक्ति को स्थान दिया गया, उसका आधार उन्होंने 'पुष्टिमार्ग' को बनाया। 'पुष्टिमार्ग' सगुण भक्ति में सर्वथा नवीन प्रयोग न होने पर भी शब्द और व्यवहार के क्षेत्र में नया ही माना जायेगा। भगवान अनुग्रह या कृपा को 'पुष्टि' कहा जाता है: ''पुष्टि किं में? पोषणम्। पोषणं किम्। तद् अनुग्रहः। भगवत्कृपा।'' पुष्टि किसे कहते हैं ? भगवान के अनुग्रह या कृपा का नाम ही पोषण है, यही पुष्टि है और इसी पुष्टि पर पुष्टिमार्ग की भक्ति पद्धति अवलम्बित है। रामानुजाचार्य ने भी ईश्वर कृपा को भक्ति का मेरूदण्ड स्थिर किया है और मर्कट-शावक तथा मार्जार-शावक के उदाहरणों द्वारा यह सिद्ध किया है कि जिस प्रकार बन्दर का बच्चा अथवा बिल्ली का बच्चा स्वयं को अपनी माँ के ऊपर छोड़ देता है, उसी प्रकार जो भक्त अपने को भगवान के आश्रय में सर्वथा छोड़ दे, वह सच्चा भक्त है। पुष्टिमार्ग का ऐसा ही संकेत 'गीता' में है। स्वयं भगवान अर्जुन से कहा है, ''सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज।'' श्री वल्लभाचार्य ने भक्ति विवेचन करते हुए यद्यपि तीन मार्गों- मर्यादामार्ग, प्रवाहमार्ग और पुष्टिमार्ग का उल्लेख किया है किन्तु उनका बल पुष्टिमार्ग पर ही है। आगम-निगम द्वारा प्रतिपादित कर्त्तव्य कर्म का विधिपूर्वक अनुसरण मर्यादामार्ग की भावना को अवश्य साथ रखते हैं। इस मार्ग के द्वारा जीवन-यापन करने वालों को बार-बार भव-बंधन सहना पड़ता है। साधारण जन इसी मार्ग में भटककर जीवन-यापन करते है। 'पुष्टिमार्ग' भगवान के अनुग्रह का मार्ग है, इस मार्ग के पथिक किसी लौकिक या बाह्य साधन का आश्रय है। भगवान के अनुग्रह पर निर्भर होकर भी जो मर्यादानुसार कर्म करते हैं, वे 'मर्यादापुर' भक्त कहते हैं और केवल अनुग्रह (कृपा) का अवलम्बन लेते हैं, वे 'शुद्ध पुष्ट' भक्त है।

वल्लभाचार्ये ने भक्तों के चार भेद किये है- प्रवाही पुष्ट भक्त, मर्यादा-पुष्ट भक्त, पुष्टि-पुष्ट भक्त, शुद्ध पुष्ट भक्त। पुष्टिमार्ग अनुग्रह पर ही निर्भर करता है: ''पुष्टिमार्गोऽनुग्रहैक साध्यः ; कृष्णानुग्रह रूप ही पुष्टि ; अनुग्रह: पुष्टिमार्गे निमायक इति स्थितिः।''

पुष्टिमार्गीय भक्ति

रागानुगा भक्ति है। श्री वल्लभाचार्य ने जिस पुष्टिमार्गीय भक्ति सम्प्रदाय की स्थापना की थी, उसका जिन हिन्दी भक्त कवियों द्वारा पल्लवन किया गया, उन्हें अष्टछाप के कवि कहा जाता है यों तो पुष्टिमार्ग को स्वीकार करने वाले अनेक भक्त उस समय विद्यमान थे, किन्तु जिन आठ भक्त कवियों पर गोस्वामी विट्ठलनाथ ने अपने आर्शीवाद की छाप लगायी थी वे 'अष्टसखा' या 'अष्टछाप' के नाम से प्रसिद्ध है। इन आठ भक्त कवियों में चार वल्लभाचार्य के शिष्य थे- कुम्भनदास, सूरदास, परमानन्ददास और कृष्णदास। अन्य चार गोस्वमी विट्ठलनाथ के शिष्य थे- गोविन्दस्वामी, नन्ददास, छीत-स्वामी और चतुर्भुजदास। ये आठों भक्त श्रीनाथ जी की नित्य लीला में अन्तरंग सखाओं के रूप में सदैव उनके साथ रहते थे, इसी मान्यता के आधार पर इन्हें अष्टसखा कहते हैं। गोवर्धन में श्रीनाथ जी की प्रतिष्ठा के बाद थे आठों सखा वहाँ सेवा के लिए प्रस्तुत हो गये। अष्टछाप के ये आठों भक्त कवि पुष्टिमार्गीय सेवा-विधि में भी पूर्ण सहयोग देते थे।

वल्लभ सम्प्रदाय में सेवा विधि का बहुत ही सांगोपांग वर्णन है और अष्टयाम की सेवा मंगलाचरण, श्रृंगार, ग्वाल, राजभोग, उत्थापन, भोग, संध्या आरती और शयन को इस सम्प्रदाय में बड़े समारोह से स्वीकार किया गया है। अष्टछाप की स्थापना 1565 ई0 में हुई थी। 'अष्टसखन में आठों सखाओं के लीलात्मक स्वरूप, लीलासक्ति औरव अविकृत स्वभाव का पूर्ण विस्तार से उल्लेख है। साम्प्रदायिक दृष्टि से अष्टछाप के ये आठ भक्त सामान्य मानव से उच्च स्थान रखते हैं और इनका लीला की दृष्टि से बड़ा महत्व है।

सूरदासजी

यों तो अष्टछाप के कवि-सन्तों की श्रृंखला बड़ी विस्तृत है तथा सभी समवेत स्वरों एवं वाणियों ने संगीत के कलेवर में अत्यधिक वृद्धि की, किन्तु इनमें भक्त कवि सूरदास का नाम परमोल्लखनीय रहा। विद्वानों के मतानुसार, बल्लभाचार्यजी सूरदासजी को ''भक्ति का समुद्र'' और गोस्वामी विट्ठलनाथ "पुष्टिमार्ग का जहाज'' कहा करते थे। इसी कारण इनकी रचना को 'सूर सागर' नाम दिया गया। भक्तवर सूरदासजी हिन्दी काव्य के तो शिरोमणि थे, किन्तु साथ ही वे श्रेष्ठ संगीतकार भी रहे, जैसा कि उनकी कृति सूरसागर के पदों पर अंकित राग व तालों के नामों से विदित होती है। इनके पदों में आसावरी, बिलावल, नट, सोरठ, कल्यान, भूपाली, बसन्त आदि नामों के उल्लेख मिलते हैं। इसी प्रकार तालों में त्रिताल, रूपक, जतताल, एकताल इसके अलावा विभिन्न प्रकार के वाद्यों का उल्लेख मिलता है जैसे- जंत्र, मृदंग, बीन, सारंगी, झाझ, सुरज़, उपांग, बाँसुरी, झालरी, पखावज, शहनाई। सूरदासजी की पद रचना और गान विधा से प्रभावित होकर ही महाप्रभु वल्लभाचार्य ने पुष्टिमार्ग में उन्हें दीक्षित किया था। वैसे तो अष्टछाप के सभी भक्त कवि होने के साथ उच्च कोटि के संगीतज्ञ भी थे किन्तु सूरदास का स्थान उनमें सर्वोपरि रहा। विद्वानों के मतानुसार ''मना रे तू कर माधौ सौ प्रीति'' इस पद को सूरदास ने राग बिलावल में निबद्ध करके बादशाह अकबर को प्रभावित किया, इससे सिद्ध होता है कि वे कवि के साथ-साथ एक गायक भी थे। यही नहीं नृत्य विषयक ज्ञान भी सूरदास जी को था। उनकी रचना में तीन प्रकार के नृत्यों का उल्लेख है, जैसे ब्रज का रास, राजस्थान का झूमर और चाचरि। उनका एक पद है- नृत्य-श्याम-श्यामा हेत मुकुट लटकनि भृकुटि मटकनि नारि मन सुखदेत।

सूरदासजी के गुरु कौन थे इस सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त नही होती। लेकिन उनके पदों से अवश्य ज्ञात होता है, कि उनके पद रागों में निबद्ध होने के कारण गेय हैं। और आज तक बाल-कृष्ण की उपासना अविरल रूप से चली आ रही है। अष्टछाप के कीर्तनकार उनके पदों को उन्हीं रागों और तालों में उसी ढंग से उन्हीं वाद्यों के साथ गाते हुए दिखाई देते हैं।

सूरदास हिन्दी साहित्य के 'सूर' तथा संगीत के मर्मज्ञ होते हुए भी उनके जीवन चरित्र के सम्बन्ध में पूर्ण अन्धकार ही है। भक्तमाल, चौरासी वैष्णवन की वार्ता और आइने अकबरी ऐसी कृतियाँ हैं, जिनसे सूर के जीवन के सम्बन्ध में कुछ संकेत अवश्य प्राप्त होते हैं। इनसे अनुमान लगाया जाता है कि इनका जन्म संवत् 1483 और मृत्यु 1525 के लगभग मानी गई। तथा जनश्रुतियाँ के आधार पर इनके जन्म का स्थान के लिए दो ग्रामों का उल्लेख मिलता है, रूनकता और सोही।

उनकी विशिष्टता - सौन्दर्य, माधुर्य और सांगीतिक भाव को परखने की उनकी अर्न्तदृष्टि ने उन्हें साहित्य का सूर्य बना दिया। उनके लिए कहा जाता है कि ''तत्त्व तत्त्व सूरा कही'' उनकी प्रतिभा बहुमुखी थी पुष्टीमार्गी सम्प्रदाय के लिए वे एक समर्पित सन्त कवि थे लेकिन उनके काव्य में कहीं भी साम्प्रदायिकता की झलक नहीं प्राप्त होती। उनके पदों में भाव-सौन्दर्य, नाद-सौन्दर्य और पद-लालित्य को अनुभूत करके श्री परशुराम चतुर्वेदी जी ने लिखा है, ''विद्यापति के पदों में इतना संगीत का स्वर माधुर्य नहीं जितना सूरदास में।'' वास्तव में सूरदास जी विद्यापति से भी आगे निकल गए। यही कारण है कि उनकी रचनाएँ साहित्य की धरोहर बनकर लोक मानस में छा गई।

उनकी रचनाओं में सूरसागर, सूरसारावली और साहित्य लहरी विशेष हैं। इनमें भी सूरसागर वास्तव में गीत, संगीत और काव्य का अगाध समुद्र था जिसने भारतीय संगीत के फैलाव में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

सूरदास अलंकारवादी नहीं थे किन्तु उनके काव्य में अलंकारों का सहज प्रयोग मिलता है। सूरदास रस सिद्ध कवि थे, जिन्होंने जीवन को आनन्दमय बनाने के लिए प्रेम और सौन्दर्य का उदात्तीकरण किया है।

अबिरात गति कछु कहति न आवै।
म मीठे फल की रस अन्तर्गत ही भावे।।
इ सबही जु निरन्तर अमित तोष उपजावै।
नी की अगम अगोचर सो जाने जो पावै।।
रूप रेख गुन जाति जगति बिन निरालंब मन चकत धावै।
सब विधि अगम बिचारहिं तातो 'सूर' सगुन लीला पद गावै।।

परमानन्द दास

काव्य-कला भावानुभूति और प्रतिभावी दृष्टि से अष्टछाप के कवियों में सूर के बाद परमानन्ददास का नाम आता है। ष्चौरासी वैष्णवन की वार्ताष् के अनुसार इनका जन्म कन्नौज के एक ब्राह्मण परिवार में 1550 ई0 में हुआ था। सूरदास के बाद ये वात्सल्य रस के श्रेष्ठ कवि हैं। परमानन्द सागर, परमानन्द वासजी का पद, दीनलीला, उद्धव लीला, ध्रुव चरित्र आदि इनकी अनेक रचनाएँ हैं। भावात्मकता, चित्रात्मकता और संजीवता इनके प्रमुख गुण हैं। संवत् 1640 के आसपास इनका निधन हो गया था।

करत निवास गोबरनधन ऊपर, निरखत नंद किशोर।।
क्यों न भये बंसी कुटा सजनी, अधर पीवत घनघोर।।
क्यों न भए गुंजा बन बेली, रहत स्याम जू की ओर।।
क्यों न भए मकराकृत कुण्डल, स्याम श्रवण झकझोर।
'परमानन्द दास' को ठाकुर, गोपिन के चितचोर।।

कुम्भनदास

इनका जन्म संवत् 1525 ई. के लगभग गोवर्धन के निकट जमुनावती नामक ग्राम में हुआ था। यह बल्लभाचार्य के प्रथम शिष्य थे। जिन्हें श्रीनाथजी की कीर्तन सेवा में लगाया गया। इन्होंने अपने-आप की भगवत-सेवा में पूर्णतया समर्पित कर दिया। कहा जाता है कि उनकी भक्ति और त्याग को सुनकर अकबर ने इन्हें फतेहपुर सीकरी बुलाया। उस समय उन्होंने एक पद सुनाया था जो बहुत प्रसिद्ध है।

भक्तन को कहा सीकरी सो काम।
आवत-जात पनतियाँ टूटीं बिसार गयो हरिनामा।।

नन्ददास

इनका कोई स्वतंत्र ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। संवत् 1639 ई. में इनकी पुण्यतिथि मानी जाती है। नन्ददास अष्टछाप के कवियों में नन्ददास का स्थान काव्य-सौन्दर्य की दृष्टि से सूरदास के बाद माना जाता इनका जन्म 1590 ई. में सूकर खेत के निकट रामपुर ग्राम में माना जाता है। ये उच्च कोटि के विद्वान और शास्त्रज्ञ थे। उनके चौदह अन्य उपलब्ध है। जिनमें रसमंजरी, अनेकार्थमंजरी, रूपमंजरी, राम पंचाध्यायी और

भंवरगी बहुत ही प्रसिद्ध हैं। रसमंजरी नायिका भेद संबंध ग्रन्थ हैं। नन्ददास जी के समस्त ग्रन्थ परिमार्जित ब्रजभाषा में हैं। उनकी ब्रजभाषा अत्यन्त प्रौढ़ है। इनका स्वर्गवास संवत् 1643 ई. के आस-पास माना जाता है।

नंद भवन को भूषण माई।
यशुदा को लाल, वीर हलधर को, राधारमण सदा सुखदाई।।
इंद्र को इंद्र, देव देवन को, ब्रह्म को ब्रह्म, महा बलदाई।
काल को काल, ईश ईशन को, वरुण को वरुण, महा बलजाई।।
शिव को धन, संतन को सरबस, महिमा वेद पुराणन गाई।
'नंददास' को जीवन गिरिधर, गोकुल मंडन कुंवर कन्हाई।।

कृष्णदास

अष्टछाप के अन्तर्गत वल्लभाचार्य के चार शिषयों में कृष्णदास अन्तिम हैं। इनका जन्म संवत् 1553 ई. में गुजरात के चिलोतरा नामक गाँव में हुआ था। कृष्णदास संगीत और काव्य के मर्मज्ञ होने के कारण सुकवि और गायक भी थे । इहोंने बाललीला, राधा-कृष्ण प्रेम प्रसंग, रूप सौन्दर्य आदि का बड़ा ही मनोहरी वर्णन किया है। इन्होंने किसी स्वतंत्र ग्रन्थ की रचना नहीं की है। इनके लगभग 248 पद अवश्य मिलते हैं। सन् 1587 ई. के लगभग इनकी मृत्यु हुई।

देख जिऊँ माई नयन रँगीलो।
लै चल सखी री तेरे पायन लागौं, गोबर्धन धर छैल छबीलो।।
नव रंग नवल, नवल गुण नागर, नवल रूप नव भाँत नवीलो।
रस में रसिक रसिकनी भौहँन, रसमय बचन रसाल रसीलो।।
सुंदर सुभग सुभगता सीमा, सुभ सुदेस सौभाग्य सुसीलो।
'कृष्णदास' प्रभु रसिक मुकुट मणि, सुभग चरित रिपुदमन हठीलो।।

चतुर्भुजदास

ये कुम्भनदास के पुत्र थे। इनका जन्म संवत् 1587 ई. में गोवर्धन के निकट जमुनावती नामक गाँव में हुआ था। इन्होंने दस वर्ष की अल्पायु में ही विट्ठलनाथ का शिष्यत्व ग्रहण किया। ये आशु थे। गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए भगवत् आराधना में लगे रहते थे। इसके पदों के तीन संग्रह-चतुर्भुज कीर्तन संग्रह, कीर्तनावली तथा दानलीला उपलब्ध हैं। इनकी मृत्यु संवत् 1642 ई. में हुई। छेति स्वामी आप मथुरा के चतुर्वेदी ब्राह्मण थे। इनके घर में यजमानी तथा पण्डिताई होती थी यह बीरबल के पुरोहित थे। इनका जन्म संवत् 1572 में माना जाता है। 1592 में विट्ठलनाथ का दर्शन होने पर इन्होंने शिष्यत्व ग्रहण कर लिया। छीति स्वामी काव्य और संगीत दोनों में निपुण थे। छीति स्वामी का कोई स्वतंत्र ग्रन्थ नहीं मिलता। कीर्तन के लिए इन्होंने जो स्फुट पद-रचना की वही पदावली के नाम से प्रसिद्ध है। जिसमें लगभग 200 पद संकलित हैं।

तब ते और न कछु सुहाय।
सुन्दर श्याम जबहिं ते देखे खरिक दुहावत गाय।।
आवति हुति चली मारग सखि, हौं अपने सति भाय।
मदन गोपाल देखि कै इकटक रही ठगी मुरझाय।।
बिखरी लोक लाज यह काजर बंधु अरु भाय।
'दास चतुर्भुज' प्रभु गिरिवरधर तन मन लियो चुराय ।।

गोविन्द स्वामी

इनका जन्म 1562 ई० में भरतपुर राज्य के आँवरी नामक गाँव में एक सनाढ्य ब्राह्मण परिवार में हुआ। 1592 ई0 में ये विट्ठलनाथ के शिष्य हुए। यह अपने समय के सर्वोत्कृष्ट संगीतज्ञ और गायन विद्या में निपुण थे। इनकी महिमा सुनकर तानसेन भी इनके दर्शन के लिए आए थे। खोज में उनके लगभग छः सौ पद प्राप्त हुए हैं जो विभिन्न रागों और विषयों में विभक्त हैं।

प्रात समय उठि जसुमति जननी गिरिधर सूत को उबटिन्हवावति।
करि सिंगार बसन भूषन सजि फूलन रचि रचि पाग बनावति।।
छुटे बंद बागे अति सोभित, बिच बीच चोव अरगजा लावति।
सूथन लाल फूँदना सोभित, आजु कि छबि कछु कहति न आवति।।
विविध कुसुम की माला उर धरि श्री कर मुरली बेंत गहावति।
लै दर्पण देखे श्रीमुख को, 'गोविंद' प्रभु चरननि सिर नावति।।

अष्टछाप कवियों का संगीतिक योगदान

कहा जाता है कि देवताओं के स्वामी विष्णु सामगान द्वारा जितनी जल्दी प्रसन्न होते हैं उतना यज्ञयाग आदि के द्वारा नहीं होते हैं। इसीलिए अष्टछाप के कवि, सन्त और भक्त संगीतकारों ने भगवान कृष्ण की पूजा अर्चना का मार्ग संगीत के सुरों में ढूंढा। क्योंकि ''पूजा से करोड़ गुना श्रेष्ठ जप, जप से करोड़ गुना श्रेष्ठ गान होता है, गान से परे कुछ नहीं है।'' तात्पर्य है कि सस्वर भक्ति ही सर्वोपरि होती है। भगवत्गीता में इसका प्रमाण है, कृष्ण कहते हैं-

"नाऽहं वसामि वैकुण्ठे योगीनां हृदये न च।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद।।"

हे नारद, मेरा वास न तो वैकुण्ठ में हैं न योगियों के हृदय में बल्कि जहाँ भक्तगण मेरा गुणगान करते हैं वहीं मेरा निवास है। इसीलिए भक्त सन्त कवियों ने सुर, लय और ताल के द्वारा भगवन्नाम लिया मध्यकाल के जितने भी भक्त कवि हुए उन्होंने अधिकतर कृष्ण के साकार बाल रूप का गान किया, तुलर ने राम का गुणगान किया तो कबीर ने निर्गुण ब्रह्म का गान किया। अभिप्राय यह है कि इन भक्त कलाकारो का संगीत क्षेत्र में अप्रतिम योगदान रहा। जिन्हें हम इस प्रकार देख सकते हैं-

- वैष्णव सम्प्रदाय ने 'कन्हैया' की लीलाओं को माधुर्यभाव से वर्णित किया, जिसमें दास्य भाव सख्य और वात्सल्य भावों का मिश्रण होता है। अतएव माधुर्य-भाव की साधना के लिए वैष्णव सम्प्रदायो के आचार्यों ने संगीत को स्वीकार किया। क्योंकि खास तौर से भारतीय संगीत ही एक ऐसा माध्यम है जिसमें चित्त की वृत्तियाँ एकदम शान्त, एकाग्र और तन्मय हो जाती हैं। आज से नहीं बल्कि अनादि काल से आध्यात्म और संगीत का सम्बन्ध भारतीय परम्परा का आधार रही हैं। इसीलिए हमारे यहाँ स्तुतिपरक मन्त्रों को संगीतात्मक स्वरूप दिया गया है।
- इन भक्त कवियों ने चाहे पद हों चाहे विष्णु पद और चाहे हरे राम, हरे कृष्ण जैसे मंत्र हों, मंदिर के प्रागंण में भगवान कृष्ण के लिए गाया। वैसे भी भगवान की स्तुति, प्रार्थना और आराधना भजन और कीर्तनों के रूप में की जाती थी। इन्हीं भजन और कीर्तनों से ''हवेली संगीत'' जैसी संगीत की शास्त्रीय परम्परा का उदय हुआ। इस संदर्भ में डॉ० लक्ष्मी नारायण गर्गजी लिखते हैं, "भक्तिपरक पद या विष्णू पद शास्त्रीय संगीत की ध्रुपद-पद्धति के जनक है।'' अर्थात् भारतीय संगीत शुद्ध और शास्त्रोक्त कहलाई जाने वाली ''ध्रुपद-धमार'' जैसी गायन शैलियों का विकास हवेली संगीत या देवालयों में गाए जाने वाले कीर्तनों और भजन से हुआ।
- भक्ति संगीत के इन पदों और गीतों में तत्कालीन शास्त्रीय राग और रागिनियों का भी विकास हुआ जैसे मालव, मारू, पंचम, सारंग, केदार, बिलावत और जयजयवन्ती आदि। इसी प्रकार अनेक तालों का प्रचार हुआ।
- वैष्णव सम्प्रदाय के इन भक्तों के आराध्य भगवान कृष्ण थे। अतएव इन्होंने "भागवत्" जैसे भक्तिपरक और धार्मिक ग्रन्थ के आधार पर कृष्ण-लीलाओं को अपने पद और भजनों में उतारा। क्योंकि बाल-कृष्ण की नित्य लीलाओं का विवरण इनके भक्ति काव्य का विषय थी। अतएव प्रातः जागरण से लेकर रात्रि शयन तक की सभी बाल कृष्ण लीलाओं को अपने संगीतात्मक पदों में स्थान दिया। कृष्ण का जन्म क्योंकि मथुरा में हुआ और उनका कर्म-क्षेत्र समस्त ब्रज-प्रदेश रहा, इस ब्रजप्रदेश में भी "वृन्दावन धाम'' को इनकी नित्यलीलाओं का केन्द्र माना गया। अतएव इन पदों की भाषा भी ब्रज रही। इसीलिए इस सम्प्रदाय में जितने भी पदों की रचना की

गई वह ब्रज भाषा में निवद्ध थी। ऐसा लगता है कि ब्रजभाषा इन्हीं पदों के लिए थी ब्रजभाषा की कोमलता और सहजता ने इन पदों को सांगीतक दृष्टि से और भी सरस और सार्वभौमिक बना दिया। अधिकांश ध्रुपद और धमारों की भाषा ब्रज है।

- अष्टछाप द्वारा प्रचलित ध्रुपद शुद्ध वाणी के थे ध्रुपद केवल स्थायी और अन्तरे वाले ही नहीं, अपितु स्थायी, अन्तरा, संचारी, आभोग ऐसे चारों अंगों वाले भी होते थे। इसमें सन्देह नहीं कि ध्रुपद धमार जैसी भारतीय संगीत की शास्त्रोक्त गायन शैलियों का विकास इन अष्टछाप कवियों के द्वारा स्थापित किए गए मंदिरों और देवालयों में ही हुआ ।
- इन सन्त गायकों के द्वारा ऐसे भक्तिपरक संगीत का विस्तार किया गया जहाँ मिथ्या वैभव, पाखंड, धर्मभ्रष्ट तथा अत्याचारी प्रवृत्ति के स्थान पर साहित्य और शास्त्रीय मर्यादाओं का पालन करने का सन्देश दिया गया जिससे मानव की प्रसुप्त क्रियात्मक शक्तियों का जागरण हो सके और उनके जीवन में सुख-शान्ति और सन्तोष की अभिवृद्धि की जा सके। इन वैष्णव सम्प्रदाय के कवियों के पदों और कीर्तनों से न केवल शास्त्रीय ध्रुपद धमार का विकास हुआ बल्कि समयानुसार होने वाले उत्सवों और पर्वों के लिए भी लोक संगीत की शैलियों का भी विस्तार किया जैसे रसिया, हिंडोला, झूला, होरी आदि। इस प्रकार अष्टछाप के कवियों के द्वारा न केवल शास्त्रीय अपितु लोक संगीत की अनेक विधाओं के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान किया गया।)

उपसंहार

भक्तिकाल में पुष्टिमार्गी अष्टछाप कवियों के काव्य के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि अकबर युगीन सौंदर्य ने उनकी कला साधना का उतना प्रश्रय नहीं दिया जितना सांस्कृतिक मूल्यहीनता के संकट से पैदा हुई चुनौतियों ने परिष्कृत किया। अष्टछाप काव्य में ये दोनों ही भक्ति का हेतु हैं और भाव विस्तार की सहायक सहायक शक्तियाँ है। काव्य और संगीत का सम्मिलन अपने प्रभावों की क्षमता करने को द्विगुणित करता है। अष्टछाप का समन्वीकृत काव्य-संगीत सांस्कृतिक परम्परा को स्वर्णाभा देने के साथ समाज को समन्वयकारी सुझाव द्वारा स्मरणीय अवदान भी देता है। वस्तुस्थिति यह है दोनों पद्धतियों में पारम्परिक अष्टछाप संगीत के संस्कार तो है, किन्तु उस समय के संगीत को तद्भव सुरक्षित रख पाना किसी के लिए सम्भव नहीं रहा। इसके मुख्यतः दो कारण रहे। एक यह कि उस काल की स्वर लिपियों का कोई स्वरांकन उपलब्ध नही है। दूसरा यह कि उस विट्ठलनाथ जी के उपरान्त सम्प्रदाय में कीर्तानियों के चयन पर ना तो इतना ध्यान दिया गया और ना ही उनके संगीत शिक्षण की कोई व्यवस्था की गई। परिणामतः वल्लभ सम्प्रदाय के मन्दिरों में औपचारिक रूप से ही पारम्परिक संगीत रहा गया है।

सन्दर्भ

1. शर्मा, प्रो0 सत्यभान. 2011. पुष्टिमार्गीय मंदिरों की संगीत परम्परा हवेली संगीत. राधा नई दिल्ली : राधा पब्लिकेशन्स.
2. शर्मा, डॉ0 नीरा. 2004. अष्टछाप संगीत : एक विश्लेषण. निवाई : नवजीवन पब्लिकेशन्स.
3. डॉ0 नगेन्द्र. 1973. हिन्दी साहित्य का इतिहास. सजिल्द : नेशनल पब्लिकेशन्स हाउस.
4. शर्मा, डॉ0 महारानी. 2008. संगीत मणि (भाग-1). इलाहाबाद : श्री भुवनेश्वरी प्रकाशन,
5. विकिपीडियाhttps://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%85%E0%A4%B7%E%A5%8D%E0%A4%9F%E0%A4%9B%E0%A4%BE%E0%A4%AA